## ।। मुक्ति ।।

मै ऐसे गांव की माटी में खेला हूं
जहां खेतिहर मजदूरो  की चौखट पर नाचती है
भय और दरिद्रता आज भी
वंचितों की बस्ती अभिशापित है
बस्तियों के कुये का पानी अपवित्र है आज भी
भूख नंगा मजदूर ना जाने कब से हाड फोड रहा है
न मिट रही भूख ना ही तन ढंक पा रहा है
कहने को आजादी है पर वो बहुत दूर पडा है
भूमिहीनता  के दलदल मे खडा है
भय से आतंकित कल के बारे में कुछ नही जानता
आंसूं पोछता आजादी कैसी वह यह भी नही जानता
वह जानता है खेत मालिकों के खेत में खून पानी करना
मजबूरी है उसकी भूख भय और पीडा मे मरना
कब सुख की बयार बही है उसकी बस्ती में
इतिहास भी नही बता सकता सही सही
पीडित जन भयभीत बंटवारे की आग से
वह भी सपने देखता है
दुनिया के और लोगो की तरह  गांव की धूप में पक कर
उसके सपनो को पंख नही लग पाते
उसे भी पता लगने लगा हैं दुनिया की तरक्की का
आदमी के चांद पर उतर जाने का भी
वह नही लांघ पर रहा है मजबूरी की मजबूत दीवारें
वह दीनता को ढोते ढोते आसू बोता हुआ
कूंच कर जा रहा है अनजाने लोक को
विरासत में भय भूख और कुछ कर्ज छोडकर
अगला जन्म सुखी हो
डाल देते हैं परिजन मुंह में गंगाजल
मुक्ति की आस में दरिद्रनारायण को गुहारकर
मैं भी  माथा ठोक लेता हूं
पूछता हूं क्या यही तेरी खुदाई है  ?
क्या इनका कभी इनका उध्दार होगा ?
सच भारती मैं ऐसे गांव की माटी में खेला हूं
जहां  अनेंकों आंसू पीकर बसर कर रहे है आज भी.....

नन्दलाल भारती

13.12.07